4

मेरी प्रारंभिक शिक्षा

यद्यपि मैं रायसाहब को गोद दे दिया गया था परंतु उनकी मृत्यु तो जब मैं मात्र 8 वर्ष का था, तभी हो चुकी थी अतः मूलरूप से मेरी शिक्षा-दीक्षा तथा लालन-पालन का भार मेरे जन्मदाता पिता पर ही था। सभी लोग एक ही भवन में एक साथ रहते थे और सब का खाना-पीना भी एक ही चौके में होता था इसलिए मुझे गोद जाने का आभास ही नहीं होता था। मेरे पिताजी मुझे अत्यंत प्यार भी करते थे। मुझे याद नहीं है कि कभी उनके मुँह से हलकी-सी डाँट सुनने का अवसर भी मुझे मिला हो। दूसरे पुत्र के हो जाने पर भी मुझे रायसाहब को गोद देने में वे हिचकिचा रहे थे क्योंकि एक तो मैं बड़ी प्रतीक्षा के बाद उन्हें प्राप्त हुआ था, दूसरे, रूपरंग और पढ़ने-लिखने में भी असाधारण था। उनकी स्थिति वैसी ही हो गयी थी जैसी विश्वामित्र द्वारा राम को माँगने पर दशरथ की हो गयी थी; जिसके लिए तुलसीदासजी ने लिखा है — **सब सुत प्रिय मोहि प्राण की नाई, राम देत नहिं बनै गुसाई।** अंत में मेरी माँ ने उन्हें समझाया—'गुलाब एक महात्मा के आशीर्वाद से मिला है और उसमें प्रारंभ से ही दिव्य संस्कार हैं। मैं अपने पुत्र को पहचानती हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि वह कभी आपकी उपेक्षा नहीं करेगा।' माँ के समझाने पर ही पिताजी मुझे अपने बड़े भाई रायसाहब को गोद देने को तैयार हो सके थे। फिर रहना तो मुझे उसी घर में उन्हींके साथ था। मेरी गोद लेनेवाली माँ तो मेरी जन्मदात्री माँ की मृत्यु के बाद ही मुझे अपने कक्ष में सोने को राजी कर सकी थी। परिवार भी सम्मिलित ही था अतः बाहर की मेरी सारी चेष्टाओं पर तो जन्मदात्री माता और जन्मदाता पिता का ही नियंत्रण था। उन्होंने मेरी शिक्षा-दीक्षा के लिए भी अपनी ओर से कोई कोर-कसर नहीं रहने दी। पढ़ाने को एक शिक्षक प्रारंभ से ही घर पर आता था। मेरी संस्कृत-शिक्षा के लिए भी रायसाहब द्वारा स्थापित रामविनोद संस्कृत विद्यालय के प्रधान शिक्षक महावीर पंडितजी घर पर आते थे। उन्होंने संस्कृत की प्रथमा परीक्षा भी मुझसे दिलवायी थी जिसमें मैं उत्तीर्ण हो गया था। यही नहीं, मुझे नित्य-व्यायामशाला ले जाने

को तपसीसिंह नामक एक छः फुटा पहलवान भी विशेष रूप से दुकान में रक्खा गया था। मैंने उसकी देखरेख में बरसों अखाड़े की धूल फाँकी है। यद्यपि मैं पहलवान तो नहीं बन सका परंतु कुश्ती में अपने से बहुत अधिक बलशाली दिखनेवाले मोटे-ताज़े बालकों को भी मैं सहज ही पछाड़ देता था। किसी भी कुश्ती में मैं कभी हारा हूँ, ऐसा मुझे याद नहीं आता। अखाड़े और कुश्ती का यह क्रम 12-13 वर्ष की अवस्था के बाद छूट गया और इस कार्य के लिए नियुक्त पहलवान तपसीसिंह को सेंट्रल बैंक की गया शाखा में, जिसके खजांची मेरे ताऊजी देवीलालजी थे और जो हमारे ही घर में किरायेदार के रूप में अवस्थित था, पहरेदार के पद पर नियुक्त कर दिया गया।

बचपन में मैं पढ़ने-लिखने में तीव्र बुद्धि का माना जाता था। जो भी पढ़ता वह मुझे सहज ही याद हो जाता था। मुझे याद नहीं है कि कभी मैंने किसी चीज को रटकर याद करने का प्रयत्न किया हो। यद्यपि घर पर एक शिक्षक ट्यूटर के रूप में निरंतर आते थे परंतु मैं जितनी देर वे पढ़ाते, उतनी ही देर पुस्तक को खोलता था। उनके जाने के बाद तो पुस्तकों को हाथ भी नहीं लगाता था। अंग्रेजी, गणित आदि पढ़ानेवाले शिक्षक के अतिरिक्त मुझे संस्कृत पढ़ाने वाले पंडित भी, जो शब्दरूप या धातुरूप याद करने को बता जाते वह उनको आते देखकर मैं पुस्तक में देख लेता। पहले से स्मरण किये हुए शब्दरूप या धातुरूप से उसमें क्या अंतर है वह ध्यान में रख लेता और इस युक्ति से पंडितजी को, आते ही, पूरा निर्दिष्ट पाठ सुना देता। इसी तीव्र स्मरण-शक्ति के कारण रामायण के **सुंदर-कांड** के तथा गीता के दशम अध्याय के कुछ अंश एवं **चाणक्य-नीति** तथा **भर्तृहरिशतक** के कितने ही श्लोक सहज ही मुझे याद हो गये थे। इसी कारण निरंतर खेल में लगे रहने पर भी कक्षा में मैं सब से ऊपर स्थान पाता था। यह मेरे परिवार में विस्मय का कारण भी था। कितनी बार तो मुझे परीक्षा का स्मरण भी नहीं रहता। स्कूल से सूचना आने पर कि परीक्षा में अभी तक मैं नहीं पहुँचा हूँ, मुझे खेल से ढुँढवाकर परीक्षा-भवन में भेजा जाता। फिर भी मैं सब से ऊपर स्थान पा लेता। घरवालों की यह भी धारणा थी कि बड़े धनी परिवार का बालक होने के कारण मेरे साथ पक्षपात किया जाता है।

परंतु जहाँ अंग्रेजी, हिंदी आदि अन्य विषयों में मैं सहज ही सर्वोपरि स्थान पा लेता था, वहीं गणित कुछ भी मेरी समझ में नहीं आता था। एक बार तो क्लास में एक शिक्षक ने मुझे इसके लिए कई बेत भी मारे थे जिसके फलस्वरूप उसे नौकरी से निकाल दिये जाने तक की नौबत आ गयी थी और मेरे मामाजी हरिबक्सजी से बहुत क्षमा-याचना करने के बाद ही वह स्कूल में टिक पाया था।

गणित की मेरी इस दुर्बलता की एक घटना याद आ रही है। मेरा स्कूल नया होने के कारण सरकारी मान्यता के लिए उसके आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों को नगर के सरकारी स्कूल में अंग्रेजी और गणित में परीक्षा देनी थी। मैं उस समय आठवीं कक्षा में था फलतः मुझे भी परीक्षा में भाग लेना पड़ा। अंग्रेजी में तो मैंने शत-प्रतिशत प्रश्न सही कर दिये परंतु दूसरे दिन गणित का पर्चा हाथ में आते ही मेरी आँखों के आगे अँधेरा छा गया। दो प्रश्न तो मैं हल भी कर सकता था परंतु घबराहट में प्रश्नपत्र के सारे प्रश्न मुझे नितांत दुर्बोध दिखाई देने लगे। मैंने निरीक्षक से शौचालय जाने का बहाना किया और स्कूल-भवन से निकल कर घर की ओर जाने लगा। सरकारी स्कूल के चपरासी ने मुझे जाते देखकर आवाज लगायी तो मैं और तेजी से भागा और रोता हुआ घर आ पहुँचा। बाद में स्कूल के मंत्री द्वारा विशेष प्रयत्न करने पर और अंग्रेजी में मेरे शत-प्रतिशत अंक देखकर, इस आधार पर कि दूसरे दिन अस्वस्थता के कारण मैंने कापी में हाथ भी नहीं लगाया था और घर भाग आया था, मुझे आठवीं कक्षा में ही रहने दिया गया। उन दिनों बोर्ड की मिडिल परीक्षा में गणित में पास होना सहज नहीं था। फिर मेरे जैसे विद्यार्थी के लिए, जिसके लिए वह पहाड़ के समान हो, उसके द्वार से निकल पाना असंभव-सा ही था। स्कूल के मंत्री ने मुझे बुलाकर कहा-'तुम जीवन भर गणित में मिडिल बोर्ड की परीक्षा पास नहीं कर सकते थे। अब मैट्रिक में ही तुम्हें फिर बोर्ड का सामना करना होगा। अभी से उसकी तैयारी करो।' वह तैयारी घर के ट्यूटर को बदलने से पूरी हुई। नगर में कालीबाबू नामक बंगाली शिक्षक की बड़ी धूम थी। वे काफी बड़ी उम्र के थे और मेरे पिताजी को भी अंग्रेजी पढ़ा चुके थे। उन्हें मेरे ट्यूटर के स्थान पर नियुक्त किया गया। वे अंग्रेजी व्याकरण में तथा गणित की पुस्तकों में दिये हुए नियमों को छोड़कर अपने निज के रचे हुए नियमों से काम लेते थे। अपने आने के 5-6 महीनों के अंदर ही उन्होंने गणित का भय मेरे मन से निकाल दिया।

मैं इसका कारण यही समझता हूँ कि मेरे पहले के शिक्षक अत्यंत योग्य होते हुए भी गणित मुझे ठीक से नहीं समझा पाते थे। ज्यों ही गणित को कालीबाबू ने दर्पण की तरह मुझे समझाना प्रारंभ किया, उसमें मेरी रुचि जाग गयी और वह मेरे लिए सहज हो गया। यही नहीं, जहाँ मैं सोचता था कि कालेज में अपनी रुचि का विषय ले लेने की सुविधा होगी अतः मुझे गणित से छुटकारा मिल जायगा, वहीं, कालेज में पहुँकर मैंने इंटर साइंस में गणित को ही अपना विषय बनाकर हिंदू विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया।